सब कुछ आपके अंदर ही है

एक आदमी बहुत बड़े संत-महात्मा के पास गया और बोला, 'हे मुनिवर! मैं राह भटक गया हूँ, कृपया मुझे बताएँ कि सच्चाई, ईमानदारी, पवित्रता क्या है?'संत ने एक नज़र आदमी को देखा, फिर कहा, 'अभी मेरा साधना करने का समय हो गया है। सामने उस तालाब में एक मछली है, उसी से तुम यह सवाल पूछो, वह तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दे देगी।

वह आदमी तालाब के पास गया। वहाँ उसे वह मछली दिखाई दी, मछली आराम कर रही थी। जैसे ही मछली ने अपनी आँख खोली तो उस आदमी ने अपना सवाल पूछा। मछली बोली, 'मैं तुम्हारे सवाल का जवाब अवश्य दूँगी किन्तु मैं सोकर उठी हूँ, इसलिए मुझे प्यास लगी है। कृपया पीने के लिए एक लौटा जल लेकर आओ। वह आदमी बोला, 'कमाल है! तुम तो जल में ही रहती हो फिर भी प्यासी हो?'मछली ने कहा, 'तुमने सही कहा। यही तुम्हारे सवाल का जवाब भी है। सच्चाई, ईमानदारी, पवित्रता तुम्हारे अंदर ही है। तुम उसे यहाँ-वहाँ खोजते फिरोगे तो वह सब नही मिलेगी, अत: स्वयं को पहचानो। उस आदमी को अपने सवाल का जवाब मिल गया।

कथा-सार ...

सुख-शांति, ईमानदारी, पवित्रता व सच्चाई इत्यादि की खोज में मानव कहाँ-कहाँ नही भटकता...क्या..क्या जतन नही करता, फिर भी उसे निराशा ही हाथ लगती है। वह नही जानता, जिसकी खोज में वह भटक रहा है, वह तो उसके भीतर ही मौजूद है। उसकी स्थिति 'पानी में रहकर मीन प्यासी' जैसी हो जाती है।

सुख का अर्थ केवल कुछ पा लेना नहीं अपितु जो है उसमे संतोष कर लेना भी है। जीवन में सुख तब नहीं आता जब हम ज्यादा पा लेते हैं बल्कि तब भी आता है जब ज्यादा पाने का भाव हमारे भीतर से चला जाता है। सोने के महल में भी आदमी दुखी हो सकता है यदि पाने की इच्छा समाप्त नहीं हुई हो और झोपड़ी में भी आदमी परम सुखी हो सकता है यदि ज्यादा पाने की लालसा मिट गई हो तो। असंतोषी को तो कितना भी मिल जाये वह हमेशा अतृप्त ही रहेगा।

सुख बाहर की नहीं, भीतर की संपदा है। यह संपदा धन से नहीं धैर्य से प्राप्त होती है। हमारा सुख इस बात पर निर्भर नहीं करता कि हम कितने धनवान है अपितु इस बात पर निर्भर करता है कि है कि कितने धैर्यवान हैं। सुख और प्रसन्नता आपकी सोच पर निर्भर करती है।

- कोलंबा कालीधर

मुल्ला नसरुद्दीन : क्या गलत कहता हूं ?

मुल्ला नसरुद्दीन गांव-गांव में घूमता और कहता कि ये काजी, न्यायविद, बुद्धिजीवी और तर्कशास्त्री भ्रमित और अज्ञानी हैं ।

मामला गंभीर बन गया । यह केस बादशाह के दरबार में पंहुचा ।काजियों और बुद्धिजीवियों ने कहा कि मुल्ला नसरुद्दीन कफिर है ! इसे सजा मिलनी चाहिये !

बादशाह के दरबार में न्याय की प्रक्रिया शुरू हुई । बादशाह ने कहा, मुल्ला नसरुद्दीन ! बोलो, तुम्हें क्या कहना है ?

मुल्ला नसरुद्दीन ने कहा, हुजूर कागज-कलम मंगवाओ ।

कागज-कलम आ गये ,मुल्ला नसरुद्दीन ने सभी काजी, न्यायविद, बुद्धिजीवी और तर्कशास्त्रियों को एक-एक कागज और कलम दिलवा दी । अब वह बोला, बादशाह के सामने लिख कर बताओ कि रोटी क्या होती है ?

किसी ने लिखा कि रोटी भोजन होता है ।

किसी ने लिखा कि रोटी आटा और पानी होता है ।

किसी ने लिखा कि रोटी खुदा की देन होती है ।

किसी ने लिखा कि रोटी सिका हुआ आटा होता है ।

किसी ने लिखा कि रोटी क्या है, इसे कोई नहीं बतला सकता ।

जितने आदमी उतने ही जवाब थे ! मुल्लानसरुद्दीन बोला, बादशाह ! जिसे ये रोज ही खाते हैं, उसके मामले में ही इनके अलग-अलग मत हैं, परन्तु मुझे इन्होंने एक मत हो कर काफिर बतला दिया !

आप ही बता दीजिये कि ऐसे लोगों को मैं भ्रमित कहता हूं ,

तो क्या गलत कहता हूं ?

- राजीव रंजन चतुर्वेदी

मंदिरों से ज्यादा स्कूल की जरूरत है

एक सवाल : चार धाम की स्थापना किसने करवाई ??

उत्तर : आदि शंकराचार्य ने।

दुसरा सवाल : आदि शंकराचार्य का जन्म कब हुआ ??

उत्तर : 788 ईस्वी में।

तीसरा सवाल : चार धाम की तीर्थ-यात्रा पर कौन अपने माँ बाप को लेकर गया ??

उत्तर : श्रवण कुमार।

चौथा सवाल : श्रवण कुमार को तीर किसने मारा??

उत्तर : राम के पिता राजा दशरथ ने।

पांचवा सवाल : राम के पिता राजा दशरथ को किसने श्राप दिया कि राम को बनवास होगा।

उत्तर : श्रावण कुमार के मां-बाप ने।

*फिर राम को बनवास त्रेता युग मे हुआ, या सातवीं-आठवीं शताब्दी में?

*अब क्या सही है, क्या काल्पनिक है, या सब कुछ काल्पनिक ही है?

*आप कुछ समझे या नहीं?

*विचित्र है ना!

लाखों साल पहले त्रेतायुग के श्रवण कुमार, आठवी शताब्दी में पैदा होने वाले शंकराचार्य द्वारा स्थापित चारो धामों की सैर अपने माता पिता को करा रहे थे, जो कई हजार साल बाद बना और उस समय उसका वजूद ही नहीं था ।

इससे क्या सिद्ध होता है?

यही कि मंदिरों से ज्यादा स्कूल की जरूरत है।

-साइबर नजर

जब महाभारत का संवाद लिखने के लिए हिंदुत्ववादियों ने राही मासूम रज़ा का किया था विरोध

भाषा

राही मासूम रज़ा ने शुरुआत में समय की कमी का हवाला देते हुए महाभारत के टेलीविज़न रूपांतरण के लिए डायलॉग लिखने की बीआर चोपड़ा की गुज़ारिश ठुकरा दी थी।

लेकिन, हिंदू धर्म के कुछ स्वयंभू संरक्षकों की ओर से उन पर टिप्पणी किए जाने के बाद राही न केवल इस भव्य टीवी सीरियल से जुड़े बल्कि उन्होंने महाभारत के संवाद भी लिखे, जो आज भी घर-घर में लोकप्रिय हैं।

यह किस्सा 'सीन-75' के पूनम सक्सेना द्वारा किए गए अंग्रेज़ी अनुवाद में मिलता है। यह रज़ा का हिंदुस्तानी भाषा में लिखा गया एक उपन्यास है, जिसका सबसे पहला प्रकाशन 1977 में हुआ था।

सक्सेना किताब के संबंध में लिखे अपने लेख में कुंवरपाल सिंह का एक संस्मरण उद्धृत करती हैं। कुंवरपाल सिंह, रजा के करीबी मित्र और अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के सहपाठी थे।

वह कुंवरपाल सिंह के ज़रिये यह कहानी सुनाती हैं, जब फिल्म निर्माता बीआर चोपड़ा ने रज़ा साहब से संवाद लिखने की गुज़ारिश की, तो उन्होंने समय की कमी का हवाला देते हुए संवाद लिखने से इंकार कर दिया लेकिन बीआर चोपड़ा ने एक संवाददाता सम्मेलन में उनके नाम की

उल्लेखनीय है कि राही मासूम रज़ा का जन्म पूर्वी उत्तर प्रदेश में गंगा किनारे स्थित गाज़ीपुर में 1927 में हुआ था। उन्हें आधा गांव, दिल एक सादा कागज़ और टोपी शुक्ला जैसे उपन्यासों के लिए जाना जाता है। उनकी पढ़ाई अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में हुई।

घोषणा कर दी।

उन्होंने लिखा, 'हिंदू धर्म के स्वयंभू संरक्षकों ने इसका विरोध किया और पत्र पर पत्र आने शुरू हो गए जिनमें लिखा था- क्या सभी हिंदू मर गए हैं, जो चोपड़ा ने एक मुसलमान को इसके संवाद लेखन का काम दे दिया।'

किताब के अनुसार, 'चोपड़ा ने यह पत्र रज़ा साहब के पास भेज दिए. इसके बाद अगले ही दिन भारत की गंगा-जमुनी तहज़ीब के पैरोकार रज़ा साहिब ने चोपड़ा को फोन किया और कहा, चोपड़ा साहिबज मैं महाभारत लिखूंगा. मैं गंगा का पुत्र हूं. मुझसे ज़्यादा भारत की सभ्यता और संस्कृति के बारे में कौन जानता है।'

साल 1990 के दौरान इंडिया टुडे पत्रिका को दिए साक्षात्कार में रज़ा से हिंदू कट्टरपंथियों के विरोध के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा, 'मुझे बहुत दुख हुआज मैं हैरान था कि एक मुसलमान द्वारा पटकथा लेखन को लेकर इतना हंगामा क्यों किया जा रहा है. क्या मैं एक भारतीय नहीं हूं।'

ये बातें रज़ा साहब के दिल से निकली थीं, जो हमेशा अपने आप को गंगा-पुत्र, गंगा किनारे वाला कहा करते थे। सक्सेना ने हार्पर कॉलिंस के हार्पर पेरेनिअल द्वारा प्रकाशित लेख 'सीन-75' में ये किस्से लिखे हैं।

उल्लेखनीय है कि राही मासूम रज़ा का जन्म पूर्वी उत्तर प्रदेश में गंगा किनारे स्थित गाज़ीपुर में 1927 में हुआ था। उन्हें आधा गांव, दिल एक सादा कागज़ और टोपी शुक्ला जैसे उपन्यासों के लिए जाना जाता है। उनकी पढ़ाई अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में हुई।

इसके बाद वह हिंदी फिल्मों में अपनी किस्मत आज़माने के लिए साल 1967 में मुंबई चले गए और वहाँ 1992 में अपनी मृत्यु तक यहां काम करते रहे।

हिंदी फिल्मों में काम के दौरान उन्होंने 300 से ज़्यादा फिल्मों की पटकथा और संवाद लिखे, जिसमें मिली (1975), मैं तुलसी तेरे आंगन की (1978), गोलमाल (1979), क़र्ज़ (1980), लम्हे (1991) प्रमुख हैं।

आइए कुछ करें कि बहुत देर न हो जाये

(14 मार्च अल्बर्ट आइंस्टीन की जयंती पर गांधी से उनका संवाद, विशेष प्रस्तुति)

आइंस्टीन महात्मा गांधी से उम्र में केवल 10 साल छोटे थे। वे दोनों व्यक्तिगत रूप से कभी एक-दूसरे से मिले नहीं। लेकिन एक बार आत्मीयतापूर्ण पत्राचार अवश्य हुआ।

यह चिट्ठी आइंस्टीन ने 27 सितंबर, 1931 को वेल्लालोर अन्नास्वामी सुंदरम् के हाथों गांधीजी को भेजी थी। आइंस्टीन ने लिखा-

अपने कारनामों से आपने बता दिया है कि हम अपने आदर्शों को हिंसा का सहारा लिए बिना भी हासिल कर सकते हैं। हम हिंसावाद के समर्थकों को भी अहिंसक उपायों से जीत सकते हैं। आपकी मिसाल से मानव समाज को प्रेरणा मिलेगी और अंतर्राष्ट्रीय सहकार और सहायता से हिंसा पर आधारित झगड़ों का अंत करने और विश्वशांति को बनाए रखने में सहायता मिलेगी। भक्ति और आदर के इस उल्लेख के साथ मैं आशा करता हूँ कि मैं एक दिन आपसे आमने-सामने मिल सकूंगा।

गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने गए गांधीजी ने 18 अक्टूबर, 1931 को लंदन से ही इस पत्र का जवाब आइंस्टीन को लिखा। अपने संक्षिप्त जवाब में उन्होंने लिखा-

प्रिय मित्र, इससे मुझे बहुत संतोष मिलता है कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ, उसका आप समर्थन करते हैं। सचमुच मेरी भी बड़ी इच्छा है कि हम दोनों की मुलाकात होती और वह भी भारत-स्थित मेरे आश्रम में।

दो अक्टूबर, 1944 को महात्मा गांधी के 75वें जन्मदिवस पर आइंस्टीन ने अपने संदेश में लिखा-

आने वाली नस्लें शायद मुश्किल से ही विश्वास करेंगी कि हाड़-मांस से बना हुआ कोई ऐसा व्यक्ति भी धरती पर चलता-फिरता था।

यह वाक्य गांधी को जानने-समझने वाली कई पीढ़ियों के लिए एक सूत्रवाक्य ही बन गया और आज भी इसे विभिन्न अवसरों पर उद्धृत किया जाता है।

30 जनवरी, 1948 को जब गांधीजी की हत्या हुई और पूरी दुनिया में शोक की

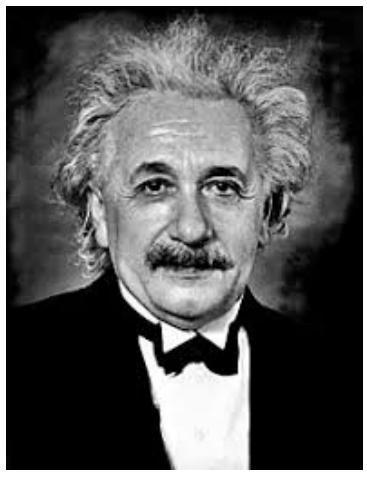

लहर फैल गई, तो आइंस्टीन भी विचलित हुए बिना नहीं रहे थे। 11 फरवरी, 1948 को वाशिंगटन में आयोजित एक स्मृति सभा को भेजे अपने संदेश में आइंस्टीन ने कहा-

वे सभी लोग जो मानव जाति के बेहतर भविष्य के लिए चिंतित हैं, वे गांधी की दुखद मृत्यु से अवश्य ही बहुत अधिक विचलित हुए होंगे। अपने ही सिद्धांत यानी अहिंसा के सिद्धांत का शिकार होकर उनकी मृत्यु हुई। उनकी मृत्यु इसलिए हुई कि देश में फैली अव्यवस्था और अशांति के दौर में भी उन्होंने किसी भी तरह की निजी हथियारबंद सुरक्षा लेने से इनकार कर दिया।

ज्यह उनका दृढ़ विश्वास था कि बल का प्रयोग अपने आप में एक बुराई है, और जो लोग पूर्ण शांति के लिए प्रयास करते हैं, उन्हें इसका त्याग करना ही चाहिए। अपनी पूरी जिंदगी उन्होंने अपने इसी विश्वास को समर्पित कर दी और अपने दिल और मन में इसी विश्वास को धारण कर उन्होंने एक महान राष्ट्र को उसकी मुक्ति के मुकाम तक पहुंचाया।

ज्उन्होंने करके दिखाया कि लोगों की निष्ठा सिर्फ राजनीतिक धोखाधड़ी और धोखेबाजी के धूर्ततापूर्ण खेल से नहीं जीती जा सकती है, बल्कि वह नैतिक रूप से उत्कृष्ट जीवन का जीवंत उदाहरण बनकर भी हासिल की जा सकती है।

आइंस्टीन ने आगे लिखा- पूरी दुनिया में गांधी के प्रति जो श्रद्धा रखी गई, वह अधिकतर हमारे अवचेतन में दबी इसी स्वीकारोक्ति पर आधारित थी कि नैतिक पतन के हमारे युग में वे अकेले ऐसे स्टेट्समैन थे, जिन्होंने राजनीतिक क्षेत्र में भी मानवीय संबंधों की उस उच्चस्तरीय संकल्पना का प्रतिनिधित्व किया जिसे हासिल करने की कामना हमें अपनी पूरी शक्ति लगाकर अवश्य ही करनी चाहिए।

ज्हमें यह कठिन सबक सीखना ही चाहिए कि मानव जाति का भविष्य सहनीय केवल तभी होगा, जब अन्य सभी मामलों की तरह ही वैश्विक मामलों में भी हमारा कार्य न्याय और कानून पर आधारित होगा, न कि ताकत के खुले आतंक पर, जैसा कि अभी तक सचमुच रहा है।

उसी साल के अंत में दो नवंबर, 1948 को इंडियन पीस कांग्रेस को भेजे गए अपने संदेश में आइंस्टीन ने इन शब्दों में महात्मा गांधी को याद किया था-

...क्रूर सैन्यशक्ति को दबाने के लिए उसी तरह की क्रूर सैन्यशक्ति का कितने भी लंबे समय तक इस्तेमाल करते रहने से कोई सफलता नहीं मिल सकती। बल्कि सफलता केवल तभी मिल सकती है, जब उस क्रूर बल का उपयोग करनेवाले लोगों के साथ असहयोग किया जाए।

...गांधी ने पहचान लिया था कि जिस दुष्चक्र में दुनिया के राष्ट्र फंस गए हैं, उससे बाहर निकलने का रास्ता केवल यही है। आइए, जो कुछ भी हमारे वश में है हम वह सब कुछ करें ताकि, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, दुनिया के सभी लोग गांधी के उपदेशों को अपनी बुनियादी नीति के रूप में स्वीकार करें।

इसके बाद भी कई अवसरों पर आइंस्टीन ने गांधी का उल्लेख किया था। एक बार उन्होंने कहा था-

ऐसी सभी परिस्थितियों में, जहां समस्याओं का तर्कसंगत समाधान संभव है, मैं ईमानदारी के साथ समन्वय पसंद करता हूँ। और यदि मौजूदा परिस्थितियों में ऐसा करना संभव न हो, तो अन्याय के विरुद्ध गांधी के शांतिपूर्ण प्रतिरोध का तरीका पसंद करता हूँ।